Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
Available online at : www.gisrrj.com
OPEN ACCESS
© 2025 GISRRJ | Volume 8 | Issue 2 | ISSN : 2582-0095

लोक साहित्य के विविध आयाम

अनुपम कुमार
असि. प्रोफेसर–हिन्दी, के.के. कालेज, इटावा, उत्तर प्रदेष।

Article Info
Volume 8, Issue 2
Page Number : 62-67

Publication Issue :
March-April-2025

Article History
Accepted : 10 March 2025
Published : 25 March 2025

प्रस्तावना :–

लोक साहित्य जनमानस की चित्त वृत्तियों का प्रतिबिम्ब माना जाता है। यह आदिम मानव की मन मस्तिष्क की भावरूपी अभिव्यक्ति है जो वह दुःख–सुख, हर्ष–विषाद, मनोरंजन व ज्ञान की प्राप्ति के लिये करता आया है। लोक साहित्य शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है– लोक और साहित्य। लोक का अर्थ है, जनमानस और साहित्य का अर्थ है उस सामान्य जनमानस की सुख–दुःखात्मक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति। लोक साहित्य उस दर्पण की तरह होता है जिसमें सामान्य जनता का सम्पूर्ण और सर्वांगीण प्रतिबिम्ब प्रदर्शित होता है। लोक साहित्य में लोक संस्कृति का जैसा प्रतिबिम्ब उपलब्ध होता है उसका दर्शन अन्यत्र नहीं होता। लोक साहित्य का सानिध्य पाकर जन समूह मन, आत्मा को पवित्र बना लेता है। भारतीय साहित्य में लोक शब्द का प्रयोग कई अर्थों में प्राप्त होता है। ऋग्वेद में प्रथमतः स्थान के अर्थ में लोक शब्द का प्रयोग किया गया है। इसके पश्चात् के साहित्य में लोक शब्द जन समुदाय के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। लोक शब्द के स्पष्टीकरण के पश्चात् लोक साहित्य के अर्थ पर यदि दृष्टिपात किया जाए तो लोक साहित्य वह साहित्य है जो सामान्य जन द्वारा, सामान्य जन के लिए, सामान्य भावभूमि पर लिखा जाता है। लोक साहित्य समस्त समाज से दूर रहने वाली, निरक्षर या अल्प शिक्षित जनता की सुख–दुःख, जीवन–मरण, हानि–लाभ की अभिव्यंजना वाली साहित्यिक गतिविधि या कृति है जो वह भावावेश में प्रस्तुत करता है। इस साहित्य का रचयिता अज्ञात व्यक्ति होता है। प्रारम्भिक लोक साहित्य में जन साधारण अपना अंश जोड़ता जाता है और इस जुड़ाव से लोक साहित्य शाश्वत रूप से गतिमान बना रहता है। लोक साहित्य लोक मानस

Copyright © 2025 The Author(s): This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution **4.0 International License (CC BY-NC 4.0)**

का साहित्य होता है। यह लोक मानस वाला जनसमुदाय सभ्यता की सीमा से बाहर होता है। यह जन मानस आदिम परम्पराओं को सुरक्षित रखता है। यह साहित्य सम्पूर्ण मानव जाति की विरासत है। लोक साहित्य में सम्पूर्ण जनता के कल्याण की भावना समाहित होती है। यह लोक के मनोरंजन के लिए लिखा जाता है। यह मौखिक परम्परा से ही प्राप्त होता है। यह वास्तव में कृति न होकर श्रुति है। इसमें व्याकरणिक नियमों की बाध्यता नहीं रहती है। लोक साहित्य, लोक विश्वास, परम्पराओं, प्रथाओं, त्योहारों तथा रीति–रिवाजों से सम्बन्धित साहित्य माना जाता है। अस्तु यह कहा जा सकता है कि साधारण जनता जिन शब्दों में अपने मनोभावों को गाकर, रोकर, हंसकर, खेलकर प्रकट करती है वह सब लोक साहित्य के अन्तर्गत समाहित होता है।

मुख्य शब्द :- साहित्य, प्रकृति, लोकोक्ति, परंपरा, सुभाषित, प्रतिबिंब, पहेलियां, मुहावरे, समुदाय, सौंदर्य, भावना, आस्था, औपचारिक, अभिव्यंजना, श्रृंखला, आडंबर, आचरण, आयाम, ग्रामीण, वैज्ञानिक।

सृष्टि के आरम्भ से ही संसार के सभी देशों के मानव प्रकृति प्रेमी हुआ करते थे। वे प्रकृति के तत्वों की पूजा अर्चना करते थे और प्राकृतिक जीवन जीते थे। तत्कालीन परिवेश में उनका आचरण, रहन–सहन, वैचारिक भूमि सभी बड़े सरल, सहज तथा स्वाभाविक थे। वह आधुनिक ढंग के आडम्बरों और बनावटीपन से मीलों दूर रहता था। वह प्रकृति की गोद में जन्म लेकर उसी में पलता हुआ सभी क्रिया कलापों का सृजन करता था। मनोरंजन या ज्ञान की वृद्धि के लिए वह साहित्य सृजन भी करता था। लेकिन उस साहित्य और आज के साहित्य में जमीन–आसमान का अन्तर है। आज का साहित्य अनेक श्रृंखलाओं में जकड़ा हुआ है। वह रस, छन्द, व्याकरण के नियमों में बंधा हुआ कराह रहा है, लेकिन जिस युग के साहित्य की हम बात कर रहे हैं उसका प्रधान गुण उसकी स्वाभाविकता, स्वछन्दता तथा सरलता को माना जा सकता है। वह साहित्य उस जंगली फूल की तरह था जिसको प्रकृति अपनी गोद में खिलाती है, उस पक्षी की भाँति था जो स्वच्छन्दतापूर्वक आकाश में विचरण करता है और पवित्रता में गंगा जल की तरह था। उस समय के साहित्य का जो अंश आज परम्परा के क्रम में सुरक्षित है उसे ही हम लोक साहित्य कहते हैं। लोक साहित्य सभ्यता से दूर रहने वाली, अपने स्वाभाविक गुणों से परिपूर्ण उस जनता का साहित्य है जो अपनी आशा–निराशा, सुख–दुःख, जीवन–मरण, हानि–लाभ की सरल, सहज, स्वाभाविक अभिव्यंजना करती है। इस प्रकार लोक साहित्य वह साहित्य है जो जनता के द्वारा, जनता के लिए लिखा गया हो।

लोक साहित्य दो शब्दों से मिलकर बना है– लोक और साहित्य। भारतीय साहित्य में लोक शब्द का प्रयोग कई अर्थों में हुआ है। सर्वप्रथम ऋग्वेद में यह 'स्थान' के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। महाभारत आदि में लोक शब्द आम जनता के लिए प्रयुक्त हुआ है। लोक का कोशगत अर्थ जन समुदाय का बोधक है। इसका प्रयोग अंग्रेजी में 'फोक' शब्द के अर्थ में प्रयुक्त होने

लगा है। 'फोक' शब्द अंग्रेजी शब्द 'Falc' का विकसित रूप है। हिन्दी में लोक शब्द के अर्थ में तीन शब्द प्रयुक्त होते हैं– लोक, जन और ग्राम। रामनरेश त्रिपाठी जी ने 'फोक' शब्द को ग्राम शब्द के अर्थ में माना है। इनसाइक्लोपीडिया में भी फोक शब्द ग्राम के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि लोक वह साधारण जनता है जो गांवों से लेकर नगरों तक निवास करती है और सहज स्वाभाविक जीवन व्यतीत करती है। सामान्यतः इस साधारण जनता का अनुभव ज्ञान औपचारिक शास्त्र ज्ञान से परे होता है। यह जन समूह शिक्षित, सुसंस्कृत और सुसभ्य समझी जाने वाली जनता के प्रभाव से दूर रहती है। इस साधारण जनता या लोक का अपनी परम्पराओं, मान्यताओं, रीति–रिवाजों और विश्वास के प्रति अटूट विश्वास व आस्था रहती है।

लोक साहित्य लोक का साहित्य है। यह सभ्यता की सीमा से बाहर का साहित्य है। यह जंगली समझी जाने वाली ग्रामीण जनता का साहित्य है। इस पर किसी व्यक्ति का अधिकार न होकर वरन् सम्पूर्ण जन समूह का अधिकार होता है। यह सम्पूर्ण मानव जाति की विरासत है। इस साहित्य में किसी एक का नहीं अपितु समस्त जन समूह के कल्पना की भावना समाहित होकर प्रवाहित होती रहती है। इस साहित्य से लोक का मनोरंजन होता है। यह साहित्य मौखिक परम्परा से प्राप्त है। इसके मूल रचयिता का पता नहीं होता। यह वास्तव में कृति न होकर श्रुति होता है। लोक साहित्य भाषा विज्ञान और व्याकरणिक नियमों से मुक्त लोक संस्कृति का वास्तविक प्रतिबिम्ब है। लोक साहित्य का क्षेत्र बड़ा व्यापक है। जहां–जहां लोक होता है वहां लोक साहित्य। लोक जीवन में लोक गीतों की महत्ता वैदिक मंत्रों की भांति है। ये जन्म से मरण तक सभी शुभ–अशुभ अवसरों पर गाए जाते हैं। बाल्यकाल से ही दादा–दादी द्वारा सुनाई जाती कथाओं से लेकर कल्याण हेतु व्रत कथाओं के प्रवचन तथा सामाजिक अवसरों पर प्रस्तुत साहित्य की परिणति होता है लोक साहित्य। साधारण जनता जिन शब्दों में गाती है, रोती है, हंसती है, खेलती है उन सबको लोक साहित्य में रखा जा सकता है।

लोक साहित्य मौखिक परम्परा से प्राप्त होता है। मौखिक रूप से पीढ़ी–दर–पीढ़ी यह हस्तान्तरित होता रहता है। लोक साहित्य का सौन्दर्य उसके मौखिक रूप में ही माना जा सकता है। निरन्तर परिवर्तनशीलता भी लोक साहित्य का एक गुण है। व्यक्ति अपने अनुसार कथ्य एवं शब्द जोड़ता जाता है। लोक साहित्य का रचनाकार अज्ञात होता है। इस साहित्य में साहित्यशास्त्र के नियमों का पालन नहीं किया जाता है। यह मानव जीवन की वास्तविक अनुभूतियों पर आधारित होता है।

लोक साहित्य को हम जन जीवन का दर्पण कहकर सम्बोधित करें तो इसमें अतिशयोक्ति न कही जाएगी। लोक साहित्य साधारण जनता के स्वाभाविक उद्‌गार होते हैं। साधारण जन जो कुछ सोचते हैं, जिस प्रकार की अनुभूति प्राप्त करते हैं उन्हीं सब चीजों की अभिव्यक्ति उनके साहित्य में पायी जाती है। ग्रामीण जनता विभिन्न संस्कारों के अवसर पर तथा ऋतुओं के समय गीतों का गान करके अपना मनोविनोद करती है। कहानियों को कहना और सुनना उसके मनोरंजन के साधन में गिना जाता है। समयानुकूल कहावतों और लोकोक्तियों का प्रयोग कर वह अपने मन के भावों को प्रकट करते हैं। इस प्रकार हम लोक साहित्य को मुख्यतः पांच भागों में विभाजित कर सकते हैं– 1. लोक गीत, 2. लोक गाथा, 3. लोक कथा, 4. लोक नाट्य, 5. प्रकीर्ण साहित्य या लोक सुभाषित।

1. **लोक गीत :–** लोक गीतों को अंग्रेजी में 'फोक सांग' का समानार्थी माना जाता है। सामान्य रूप से फोक शब्द का प्रयोग सभ्यता से दूर रहने वाली जातियों के लिए किया जाता है परन्तु हिन्दी में फोक शब्द का प्रयोग साधारण जनता के लिए होता रहा है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि लोक गीत वह रचना है जो ग्रामीण जनों को सामान्य भावों को गीत के रूप में अभिव्यक्त करे। लोक गीतों में प्राण तत्व के रूप में संगीत और लय को रखा जा

सकता है। लोक गीत मानव के हर्ष–विषाद, सुख–दुःख, जीवन–मरण आदि जीवन की गतिविधियों का प्रतिबिम्ब होते हैं। सामान्य, साधारण जन के मन में हृदय के जो उद्‌गार संगीत के साथ प्रवाहित होते हैं उन्हें 'लोक गीत' कहा जाता है। लोक गीत नया पुराना नहीं होता है, वह तो उस जंगली वृक्ष के समान होता है जिसकी जड़ें जमीन में बहुत गहरे तक धसीं होती हैं, परन्तु शाखाएँ, पत्ते और फूल नित नए निकलते रहते हैं। लोक गीत भारतीय संगीत की आत्मा के रूप में माना जा सकता है। लोक गीतों में किसी भी देश के जनजीवन का प्रतिबिम्ब प्रदर्शित होता है। लोक गीत आदिम जन समूह की वह संगीतमयी काव्य संरचना है जो मौखिक परम्परा से प्राप्त होता रहा है। यह साहित्य प्राचीन अनपढ़ लोगों द्वारा अज्ञात रूप से रचा गया और मौखिक परम्परा से आज भी प्राप्त हो रहा है।

लोक गीतों की प्रचुरता एवं व्यापकता के कारण इनका सर्वमान्य विभाजन किया जाना सम्भव नहीं प्रतीत होता है। लोक गीतों का ऐसा कोई विभाजन या वर्गीकरण उपलब्ध नहीं है जिसे पूर्णतः वैज्ञानिक और सर्वमान्य कहा जा सके फिर भी सामान्य वर्गीकरण करने का प्रयास किया गया है। जीवन में समस्त पहलुओं से सम्बन्धित लोक गीतों को निम्न भागों में विभाजित किया जा सकता है–

(क) **संस्कार सम्बन्धी लोक गीत–** नामकरण संस्कार गीत, जनेऊ, विवाह, मृत्यु संस्कार सम्बन्धी गीत इत्यादि।

(ख) **ऋतु सम्बन्धी लोक गीत–** आषाण माह में आल्हा, फाल्गुन में फाग, चैत में चैती, वर्षा काल में झूलना, हिंडोला।

(ग) **व्रत–उत्सव एवं त्योहार सम्बन्धी लोक गीत–** गणेश चतुर्थी सम्बन्धी, नवरात्रि के लोक गीत, कृष्ण जन्माष्टमी से जुड़े लोक गीत, तीज व्रत के गीत, नाग पंचमी में नाग देवता के गीत।

(घ) **जाति सम्बन्धी लोक गीत–** अहीर जाति का विरहा, दुःसाध जाति के लोगों का पंचरा गौड़ों के गीत, धोबियों के गीत, माली के गीत।

(ड़) **श्रम सम्बन्धी लोक गीत–** चक्की पीसना, चरखा कातना, ओखली, पानी भरने के गीत, कोल्हू चलाने के गीत, रोपनी के गीत, खेत निराने के गीत।

(च) **पौराणिक गीत–** हरिश्चन्द्र के गीत, छठी माता के गीत, राजा विक्रमादित्य के गीत, नायक बंजारा के गीत।

2. लोक गाथा :– किसी कथा विशेष पर आधारित प्रबन्ध रचना को जो काव्य में लिखित या गायी जाती है लोक गाथा कहा जाता है। इसमें गायक लोक जीवन में चली आ रही कथा को अपने ढंग से अपने शब्दों में प्रस्तुत करता है। लोक गीत और लोक गाथा में विशेष अन्तर नहीं होता है। लोक गीत में कथानक बहुत नगण्य होता है। गेयता लोक गीतों का प्रधान गुण है। परन्तु लोक गाथाओं में प्रधानता कथावस्तु की होती है। गेय तत्व उसमें गौण स्थान रखता है। आकार की दृष्टि से लोक गीत छोटे होते हैं परन्तु लोक गाथा कथानक तत्व की प्रधानता के कारण बहुत बड़े आकार की होती है। लोक गीतों में श्रृंगार और करुण रस की नदी प्रवाहित होती है परन्तु लोक कथाएँ प्रधानतः वीर रस से परिपूर्ण हुआ करती है। लोक गाथाओं के रचनाकार भी प्रायः अज्ञात व्यक्ति हैं। इनके मूल पाठों की प्राप्ति नहीं हो पायी है। ये मौखिक परम्परा से अनुस्यूत वह रचना है जो संगीत और नृत्य के साहचर्य एवं सहयोग से प्रवाहित हो रही है।

लोक गाथाओं को हम सामान्यतः दो बिन्दुओं को केन्द्र में रखकर विभाजित कर सकते हैं। प्रथम आकार व द्वितीय उनके विषय वस्तु को दृष्टि में रखकर। आकार को जब हम केन्द्र बिन्दु बनाते हैं तो लोक गाथाएँ दो प्रकार की दृष्टिगत होती हैं। प्रथम लघु तथा द्वितीय वृहत लोक गाथाएँ। लघु लोक गाथाएँ के गाथाएँ हैं जो आकार में छोटी हैं जैसे भगवती देवी और कुसुमा

देवी की गाथाएँ। वृहत लोक गाथा प्रबन्धात्मक रूप में प्राप्त होती हैं जो बहुत बड़े आकार की होती हैं जैसे हीर–राँझा, ढोला–भारू, आल्हा–ऊदल की गाथाएँ। लोक गाथाओं का द्वितीय वर्गीकरण उनके व्याख्यायिक विषय को केन्द्र में रखकर किया जा सकता है। इन गाथाओं में जिन विषयों को आधार बनाया गया है उन्हीं आधारों पर लोक गाथाओं का वर्गीकरण करते हैं तो प्रधानतया तीन प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है।

(क) **प्रेम कथात्मक लोक गाथाएँ–** भरथरी चरित, बिहुला, हीर रांझा, सोहनी महिवाल इत्यादि।

(ख) **वीर गाथात्मक लोक गाथाएँ–** आल्हा–ऊदल की गाथा, लोरिकायन, विजयमल की गाथा।

(ग) **रोमांच प्रधान लोक गाथाएँ–** सोरठी की लोक गाथा

3. लोक कथा :– लोक साहित्य में लोक कथाओं का भी अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। व्यापकता एवं प्रचुरता के कारण इनका मूल्य बहुत अधिक सिद्ध होता है। लोक कथाएँ कुछ निश्चित कथा रूढ़ियों और शैलियों में ढली दादा–दादी, नाना–नानी की कहानियों का वह समूह है जिसे बचपन से सुना जाता है। इनका निर्माण कब, कहाँ, कैसे हुआ? बताना बड़ा दुष्कर कार्य है। लोक कथाओ का जन्म मानव जन्म के साथ ही हुआ। यही कारण है कि यह विधा सबसे प्राचीन विधा मानी जाती है। मुख्यतः लोक मानस से जुड़ी और लोक परम्परा में मौखिक रूप से कही जाने वाली कथा ही लोक कथा है। लोक कथाओं को कहने और सुनने की एक शैली निर्धारित रहती है। कोई व्यक्ति कथा को सुनाता है, कथा सुनाने वाले के साथ ही सुनने वाले की भी शैली निर्धारित है। कथा कहने वाला तब तक कथा सुनाता रहता है जब तक सुनने वाला हुंकारी भरता रहता है। इससे कथा में प्रवाह और गतिशीलता बनी रहती है। भारतीय साहित्य में वैदिक काल से ही कथाएँ जनजीवन का प्रमुख अंग रही हैं और इनका प्रवाह वर्तमान में भी हो रहा है। लोक कथाएँ लोक मानस के सांस्कृतिक और सामाजिक पक्ष की पूर्ण अभिव्यंजना करती है। ये मानवीय संवेदना से जुड़कर लोक चेतना को सार्थक करती है। अध्ययन और संकलन की दृष्टि से लोक कथाओं को निम्नलिखित वर्गों में विभाजित किया जा सकता है–

(क) **उपदेश कथा–** पंचतंत्र, हितोपदेश की समस्त कथाएँ।

(ख) **व्रत कथा–** वट–सावित्री व्रत कथा, शीतला अष्टमी की कथा, हरितालिका की कथा, करवा–चौथ की कथा इत्यादि।

(ग) **परी कथा–**

(घ) **नाग कथाएँ–** नाग पंचमी की कथा, तेजा दशमी पर्व कथा, वीर तेजा की नाग कथा।

(ड़) **प्रेम प्रधान कथाएँ–** सदावृज–सारंगा की कथा, शीत–बसंत की कथा

4. लोक नाट्य :– भारतीय साहित्य में नाटक की ऐतिहासिक परम्परा अत्यन्त प्राचीन मानी जाती है। भरत मुनि ने अपने 'नाट्य शास्त्र' में इस विधा का बहुत ही सांगोपांग विवेचन किया है। इसके अतिरिक्त अन्य विद्वानों ने भी नाट्य विधा पर अत्यन्त सराहनीय कार्य किया है। नाटक की उत्पत्ति के विषय में कहा जाता है कि इन्द्र आदि देवताओं ने सर्वसाधारण के मनोरंजन हेतु ब्रह्मा जी से किसी मनोविनोद के साधन की उत्पत्ति करने का अनुरोध किया। वे ऐसा साधन चाहते थे जो दृश्य और श्रृव्य होने के साथ ही सभी वर्गों के लोगों के सामूहिक प्रतिभाग का भी माध्यम बने। इस प्रकार ब्रह्मा जी ने नाट्य वेद नामक पंचम वेद की रचना की। इस कथा से यह स्पष्ट है कि नाट्य वेद की रचना सभी वर्गों के लिए तथा जन–मन के मनोरंजन हेतु की गई। लोक नाटक, लोक साहित्य की एक लोकप्रिय विधा है। इनका जनजीवन से बहुत गहरा नाता रहा है। जब कोई कृति नाट्य के रूप में कथावस्तु को प्रस्तुत करती है तो नाटक कही जाती है। इसी प्रकार जब जन

समूह द्वारा कोई नाट्य रूप प्रस्तुत किया जाता है तो वह लोक नाट्य कहलाता है। इसमें संवाद और गीत संगीत के माध्यम से प्रस्तुति दी जाती है जो मंच पर होती है। इसमें कलाकार स्वयं मंच पर ही अपने संवाद की सर्जना कर लेते हैं। लोक उत्सव, मांगलिक कार्यक्रमों एवं धर्म से सम्बन्धित पर्वों–त्योहारों पर इन नाटकों में अभिनय किये जाने के कारण यह नाटक लोक जीवन से गहरे अर्थों में जुड़े रहते हैं। इनकी प्रस्तुति सरल और सरस भाषा में की जाती है जो जन सामान्य की समझ में आ जाती है। लोक नाट्य सामूहिक प्रतिभा की प्रस्तुति होती है। यह लोक रुचि एवं लोक परम्परा पर आधारित होते हैं। इनमें शास्त्रीय तत्वों की कोई भूमिका नहीं होती है। संगीत तत्व से परिपूर्ण होने के साथ ही विदूषक की विशेष भूमिका से ये हास्य का भी संचार करते हैं। लोक नाटक की सबसे बड़ी विशेषता उनका लोक धर्मी होना है। यह लोक के समाज का जन मंच होता है जिसमें सभी अपनी प्रस्तुति देते हैं। नौटंकी उत्तर प्रदेश में तो जात्रा बंगाल में प्रचलित लोक नाट्य है। भवई गुजरात का, तमाशा महाराष्ट्र का एवं यक्षगान कर्नाटक का लोकप्रिय नाट्य है। लोक नाटकों को प्रमुखतः तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है–

(क) **नृत्य प्रधान लोक नाट्य–** रासलीला, विदेसिया, कीर्तनिया

(ख) **संगीत प्रधान लोक नाट्य–** तमाशा, शेखावटी नौटंकी

(ग) **अभिनय प्रधान लोक नाट्य–** नकल, बहुरूपिया

5. प्रकीर्ण साहित्य या लोक सुभाषित :– ग्रामीण जन अपने दैनिक जीवन में अनेक प्रकार की लोकोक्तियाँ, मुहावरों, पहेलियों एवं सूक्तियों का प्रयोग करते रहते हैं। इस प्रयोग से उनके वाक्चातुर्य का बोध होता है। लोकोक्तियों के प्रयोग से कथन में एक अद्भुत शक्ति आ जाती है और सुनने वाले पर भी एक विशेष प्रभाव पड़ता है। मुहावरे भाषा के स्वरूप को सुन्दरता प्रदान करते हैं। मनोरंजन हेतु पहेलियों का भी प्रयोग किया जाता है। लोक सुभाषितों में अभिव्यक्ति संक्षिप्त और सघन रूप से विद्यमान होती है। संक्षिप्त होते हुए भी अपनी बात को प्रकट कर देने की भावना इनमें पूर्ण रूपेण विद्यमान रहती है। इनमें लोक जीवन के अनुभूत ज्ञान की त्रिवेणी बहती रहती है जिनमें स्वानुभूति की मात्रा सर्वाधिक होती है। लोक सुभाषित सामाजिक ढांचे के यथार्थ बोध को व्याख्यायित करते हैं।

सामान्य रूप से लोक साहित्य के प्रकीर्ण साहित्य या लोक सुभाषित को निम्नलिखित रूपों में वर्गीकृत किया जा सकता है–

(क) **लोकोक्तियाँ या कहावतें**

(ख) **मुहावरे**

(ग) **पहेलियाँ**

(घ) **ढकोसले**

(ड़) **लोरियाँ या पालने के गीत**

सन्दर्भ ग्रन्थ–

1. उपाध्याय, डॉ. कृष्णदेव, लोक साहित्य की भूमिका
2. डॉ. सत्येन्द्र, लोक साहित्य विज्ञान
3. त्रिपाठी, डा. रामनरेश, सोहर
4. त्रिपाठी, डा. रामनरेश, कविता कौमुदी (भाग–5) (ग्राम गीत)
5. इण्टरनेट